विक्रमादित्य की ऐतिहासिकता जैनसाहित्य के सन्दर्भ में

- डॉ. सागरमल जैन

भारतीय इतिहास में अवन्तिकाधिपति विक्रमादित्य का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है । मात्र यही नहीं, उनके नाम पर प्रचलित विक्रम संवत का प्रचलन भी लगभग सम्पूर्ण देश में है । लोकानुश्रुतिओ में भी उनका इतिवृत्त बहुचर्चित है । परवर्ती काल के शताधिक ग्रन्थो में उनका इतिवृत्त उल्लेखित है । फिरभी उनकी ऐतिहासिकता को लेकर इतिहासज्ञ आज भी किसी निर्णयात्मक स्थिति में नहीं पहुँच पा रहे है । इसके कुछ कारण है– प्रथम तो यह कि विक्रमादित्य बिरुद के धारक अनेक राजा हुए है अतः उनमें से कौन विक्रम संवत का प्रवर्तक है, यह निर्णय करना कठिन है, क्योंकि वे सभी ईसा की चौथी शताब्दी के या उसके भी परवर्ती है । दूसरे विक्रमादित्य मात्र उनका एक बिरुद है, वास्तविक नाम नहीं है । दूसरे विक्रमसंवत के प्रवर्तक विक्रमादित्य का कोईभी अभिलेखीय साक्ष्य ९वीं शती से पूर्व का नहीं है । विक्रम संवत के स्पष्ट उल्लेख पूर्वक जो अभिलेखीय साक्ष्य है वह ई. सन् ८४१ (विक्रमसंवत् ८९८) का है । उसके पूर्व के अभिलेखो में यह कृतसंवत या मालव संवतके नाम से ही उल्लेखित है । तीसरे विक्रमादित्य के जो नवरत्न माने जाते है, वे भी ऐतिहासिक दृष्टि से विभिन्न कालों के व्यक्ति है ।

विक्रमादित्य के नाम का उल्लेख करनेवाली हाल की गाथासप्तशती की एक गाथा को छोड़कर कोईभी साहित्यिक साक्ष्य नवीं-दसवीं शती के पूर्व का नहीं है । विक्रमादित्य के जीवनवृत्तका उल्लेख करनेवाले शताधिक ग्रन्थ है, जिनमें पचास से अधिक कृतियाँ तो जैनाचार्यों द्वारा रचित है । उनमें कुछ ग्रन्थो को छोड़कर लगभग सभी बारहवीं-तेरहवीं शती के या उससे भी परवर्ती कालके है । यही कारण है कि इतिहासज्ञ उनके अस्तित्व के सम्बन्ध में सन्दिग्ध है ।

किन्तु जैन स्रोतों से इस सम्बन्ध में विक्रमादित्य जो सूचनाएँ उपलब्ध

है, उनकी विश्वसनीयताको पूरी तरह नकारा भी नहीं जा सकता है ।

यह सत्य है कि जैनागमों में विक्रमादित्य सम्बन्धी कोई भी उल्लेख उपलब्ध नहीं है । जैनसाहित्य में विक्रमसंवत प्रवर्तक विक्रमादित्य का सम्बन्ध दो कथानकों से जोड़ा जाता है - प्रथम तो कालकाचार्य की कथा से और दूसरा सिद्धसेन दिवाकरके कथानक से । इसके अतिरिक कुछ पट्टावलियों में भी विक्रमादित्य का उल्लेख है । उनमें यह बताया गया है कि महावीर के निर्वाण के ४७० वर्ष पश्चात् विक्रम संवत का प्रवर्तन हुआ और यह मान्यता आज बहुजन सम्मत भी है । यद्यपि कहीं ४६६ वर्ष और ४५ दिन पश्चात् विक्रम संवत का प्रवर्तन माना गया है । तिलोयपण्णत्ति का जो प्राचीनतम (लगभग-पांचवी-छठ्ठी सदी) उल्लेख है । उसमें वीरनिर्वाण के ४६१ वर्ष पश्चात् शकराजा हुआ - ऐसा जो उल्लेख है उसके आधार पर यह तिथि अधिक उचित लगती है - क्योंकि कालक कथाके अनुसार भी वीरनिर्वाण के ४६१ वर्ष पश्चात् कालकसूरिने गर्दभिल्ल को सत्ता से च्युत कर उज्जैनी में शक शाही को गद्दी पर बिठाया और चार वर्ष पश्चात् गर्दभिल्ल के पुत्र विक्रमादित्यने उन्हें पराजित कर पुनः उज्जैन पर अपना शासन स्थापित किया । दूसरी बार पुनः वीरनिर्वाण के ६०५ वर्ष और पांच माह पश्चात् शकोने मथुरा पर अपना अधिकार-शक शासनकी नीव डाली और शकसंवत् का प्रवर्तन किया । इस बार शको का शासन अधिक स्थायी रहा । इसका उन्मूलन चन्द्रगुप्त द्वितीयने किया और विक्रमादित्य का बिरुद धारण किया । मेरी दृष्टिमें उज्जैनी के शक-शाही को पराजित करनेवाले का नाम विक्रमादित्य था, जबकि चन्द्रगुप्त द्वितीय की यह एक उपाधि थी । प्रथम ने शको से शासन छीनकर अपने को 'शकारि' बिरुद से मण्डित किया था । क्योंकि शकों ने उसके पिता का राज्य छीना था अतः उसके शक अरि या शत्रु थे अतः उसका अपने को 'शकारि' कहना अधिक संगत था । दूसरे विक्रमादित्यने अपने शौर्य से शकों को पराजित किया था अतः विक्रम = पौरुष का सूर्य था ।

यद्यपि निशीथचूर्णि में कालकाचार्य की कथा विस्तार से उपलब्ध है किन्तु उसमें गर्दभिल्ल द्वारा कालक की बहिन साध्वी सरस्वती के

अपहरण, कलकाचार्य द्वारा सिन्धुदेश (परिसकूल) से शको को लाने गर्द भिल्ल की गर्दभी विद्या के विफल कर गर्दभिल्ल को पराजित कर और सरस्वती को मुक्त कराकर पुनः दीक्षित करने आदि के ही उल्लेख है । उसमे विक्रमादित्य सम्बन्धी कोई उल्लेख नहीं है । जैनसाहित्य में विक्रमादित्य सम्बन्धी हमें जो रचनाए उपलब्ध है – उनमें बृहत्कल्पचूर्णि (७वी शती) प्रभावक चरित्र (१२३७ इ.), प्रबन्धकोश (१३३९), प्रबन्ध चिन्तामणि (१३०५ ई.), पुरातनप्रबन्धसंग्रह, कहावली (भद्रेश्वर), शत्रुञ्जय महात्म्य, लघु शत्रुञ्जयकल्प विविधतीर्थकल्प (१३३२), विधिकौमुदी, अष्टाह्निकव्याख्यान, दुषमाकालश्रमण संघस्तुति, पट्टावली सारोद्धार, खरतरगच्छसूरि परम्परा प्रशस्ति, विषापहारस्तोत्र भाष्य, कल्याणमन्दिर स्तोत्र भाष्य, सप्ततिकावृत्ति, विचारसारप्रकरण, विधिकौमुदी, विक्रमचरित्र आदि अनेक ग्रन्थ है, जिनमें विक्रमादित्य का इतिवृत्त किञ्चित् भिन्नताओं के साथ उपलब्ध है । खेद मात्र यही है ये सभी ग्रन्थ प्रायः सातवीं शती के पश्चात् के है । यही कारण है कि इतिहासज्ञ इनकी प्रामाणिकता पर संशय करते हैं । किन्तु आचार्य हस्तीमलजी ने दस ऐसे तर्क प्रस्तुत किये है, जिससे इनकी प्रामाणिकता पर विश्वास किया जा सकता है । उनके कथन को मैंने अपनी शब्दावली आगे प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है । (देखे– जैनधर्म का मौलिक इतिहास खण्ड २ पृ. ५४५-५४८)

(१) विक्रमसंवत आज दोसहस्राब्दियों से कुछ अधिक काल से प्रवर्तित है आखिर इसका प्रवर्तक कोई भी होगा– बिना प्रवर्तक के इसका प्रवर्तन तो सम्भव नहीं है और यदि अनुश्रुति उसे 'विक्रमादित्य' (प्रथम) से जोडती है तो उसे पूरी तरह अस्वीकार भी नहीं किया जा सकता है। मेरी दृष्टि में अनुश्रुतियाँ केवल काल्पनिक नहीं होती है ।

(२) विक्रमादित्य से सम्बन्धित अनेक कथाएँ आज भी जनसाधारण में प्रचलित है, उनका आखिर कोई तो भी आधार रहा होगा । केवल उन आधारों को खोज न पाने की अपनी अक्षमता के आधार पर उन्हें मिथ्या तो नहीं कहा सकता है । जिस इतिहास का इतना बडा जनाधार है उसे सर्वथा मिथ्या कहना भी एक दुस्साहस ही होगा ।

(३) प्राचीन-प्राकृत ग्रन्थ गाथासप्तशती, जिसे विक्रमकी प्रथम-द्वितीय शती

में सातवाहनवंशी राजा हाल ने संकलित किया था- उसमें विक्रमादित्य की दानशीलता का स्पष्ट उल्लेख है । यह उल्लेख चन्द्रगुप्त (द्वितीय) विक्रमादित्य के सम्बन्ध में या उससे परवर्ती अन्य विक्रमादित्य उपाधिधारी किसी राजा के सम्बन्ध में नहीं हो सकता है, क्योंकि वे इस संकलन से परवर्ती काल में हुए है अतः विक्रम संवत् की प्रथम शती से पूर्व कोई अवन्ती का विक्रमादित्य नामक राजा हुआ है यह मानना होगा । यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि विक्रमादित्य हाल के किसी पूर्वज सातवाहन वंशी राजा से युद्धक्षेत्र में आहत होकर मृत्यु को प्राप्त हुए थे । - वह गाथा निम्न है-

संवाहणसुहरसतोसिएण, देन्तेण तुह करे लक्खं ।
चलणेण विक्कमाइच्च चरिअमणुसिक्खिअं तिस्सा ।

— गाथा सप्तशती ४६४

(४) सातवाहनवंशी राजा हाल के समकालीन गुणाढ्य ने पैशाची प्राकृत में बृहत्कथा की रचना की थी । उसी आधार पर सोमदेव भट्टने संस्कृत में कथासरित्सागर की रचना की - उसमें भी विक्रमादित्य के विशिष्ट गुणों का उल्लेख है (देखें-लम्बक ६ तरङ्ग १ तथा सम्बक १८ तङ्ग १)

(५) भविष्यपुराण और स्कन्दपुराण में भी विक्रम का जो उल्लेख है, वह नितान्त काल्पनिक है - ऐसा नहीं कहा जा सकता है । भविष्यपुराण खण्ड २ अध्याय २३ में जो विक्रमादित्य का इतिवृत्त दिया गया है - वह लोकपरम्परा के अनुसार विक्रमादित्य को भर्तृहरि का भाई बताती है तथा उनका जन्म शकों के विनाशार्थ हुआ ऐसा उल्लेख करता है । अतः इस साक्ष्य को पूर्णतः नकारा नहीं जा सकता है ।

(६) गुणाढ्य (ई.सन् ७८) द्वारा रचित बृहत्कथा के आधार पर क्षेमेन्द्र द्वारा रचित बृहत्कथा मञ्जरी में भी विक्रमादित्य का उल्लेख है । उसमें भी म्लेच्छ, यवन, शकादि को पराजित करनेवाले एक शासक के रूप में विक्रमादित्य का निर्देश किया गया है ।

(७) श्री भागवत स्कन्ध १२ अध्याय १ में जो राजाओं की वंशावली दी

गई है, उसमें दश गर्दभिनो नृपाः के आधार पर गर्दभिल्ल वंश के दस राजाओं का उल्लेख है । जैन परम्परा में विक्रम को गर्दभिल्ल के रूप में उल्लेखित किया गया है ।

(८) विक्रम संवत के प्रवर्तन के पूर्व जो राजा हुए उसमें किसीने विक्रमादित्य ऐसी पदवी धारण नहीं की । जो भी राजा विक्रमादित्य के पश्चात् हुए है- उन्होंने ही विक्रमादित्य का बिरुद धारण किया है - जैसे सातकर्णी गौतमीपुत्र (लगभग ई० सन् प्रथम-द्वितीय शती) चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य (ई. चतुर्थशती) आदि-उन्होंने विक्रमादित्य की यशोगाथा को सुनकर अपने को उसके समान बताने की यशोगाथा के अनुसार अपने को उसके समान बताने हेतु ही यह बिरुद धारण किया है । अतः गर्दभिल्लपुत्र विक्रमादित्य इनसे पूर्ववर्ती हैं ।

(९) बाणभट्ट के पूर्ववर्ती कवि सुबन्धु ने वासवदत्ता के प्रास्ताविक श्लोक १० में विक्रमादित्य की कीर्ति का उल्लेख किया है ।

(१०) ई०पू० की मालवमुद्राओ में मालवगण का उल्लेख है, वस्तुतः विक्रमादित्य ने अपने पितृराज्य पर पुनः अधिकार मालवगण के सहयोग से ही प्राप्त किया था, अतः यह स्वाभाविक था कि उन्होंने मालवसंवत के नाम से ही अपने संवत् का प्रवर्तन किया । यही कारण है कि विक्रम संवत् के प्रारम्भिक उल्लेख मालवसंवत् या कृत संवत के नाम से ही मिलते है ।

(११) विक्रमादित्य की सभा के जो नवरत्न थे, उनमें क्षपणक के रूप में जैनमुनिका भी उल्लेख है, कथानकों में इनका सम्बन्ध सिद्धसेन दिवाकर से जोडा गया है, किन्तु सिद्धसेन दिवाकरके काल को लेकर स्वयं जैन विद्वानों में भी मतभेद है, अधिकांश जैन विद्वान भी उन्हें चौथी-पाँचवी शती का मानते है, किन्तु जहाँतक जैन पट्टावलियों का सम्बन्ध है, उनमें सिद्धसेन का काल वीर निर्वाण संवत् ५०० बताया गया है, इस आधार पर विक्रमादित्य और सिद्धसेन की समकालिकता मानी जा सकती है ।

(१२) मुनि हस्तिमलजीने इनके अतिरिक्त एक प्रमाण प्राचीन अरबी ग्रन्थ

सेअरूल ओकूल (पृ. ३१५) का दिया था – जिसमें विकरमतुन के उल्लेख पूर्वक विक्रम की यशोगाथा वर्णित है । इस ग्रन्थका काल विक्रम संवत् की चौथी-पाँचवी शती है । यह हिजरी सन् से १६५ वर्ष पूर्व की घटना है ।

इस प्रकार विक्रमादित्य (प्रथम) को मात्र काल्पनिक व्यक्ति नहीं कहा जा सकता है । मेरी दृष्टि में गर्दभिल्ल के पुत्र एवं शकशाही से उज्जैनी के शासन पर पुनः अधिकार करने वाले विक्रमादित्य एक ऐतिहासिक व्यक्ति है, इसे नकारा नहीं जा सकता है । उन्होंने मालव गण के सहयोग से उज्जैनी पर अधिकार किया था । यही कारण है कि यह प्रान्त आज भी मालव देश कहा जाता है ।

(१३) जैनपरम्परा में विक्रमादित्य के चरित्र को लेकर जो विपुल साहित्य रचा गया है, वह भी इस तथ्य की पुष्टि करता है कि किसी न किसी रूप विक्रमादित्य (प्रथम) का अस्तित्व अवश्य रहा है । विक्रमादित्य के कथानक को लेकर जैन परम्परा में निम्न ग्रन्थ रहा है । विक्रमादित्यके कथानक को लेकर जैन परम्परा में निम्न ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं –

(१) विक्रमचरित्र – यह ग्रन्थ काशहृदगच्छ के देवचन्द्र के शिष्य देवमूर्ति द्वारा लिखा गया है । इसकी एक प्रतिलिपि में प्रतिलिपि लेखन संवत् १४९२ उल्लेखित है, इससे यह सिद्ध होता है यह रचना उसके पूर्व की है। इस ग्रन्थ का एक अन्य नाम सिंहासनद्वात्रिंशिका भी है। इसका ग्रन्थ परिमाण ५३०० है। कृति संस्कृत में है ।

(२) विक्रमाचरित्र नामक एक अन्य कृति भी उपलब्ध है । इसके कर्ता पं. सोमसूरि है । ग्रन्थ परिमाण ६००० है ।

(३) विक्रमचरित्र नामक तीसरी कृति साधुरत्न के शिष्य राजमेरु द्वारा संस्कृत गद्य में लिखी गई है । इसका रचनाकाल वि.सं. १५७९ है ।

(४) विक्रमादित्य के चरित्र से सम्बन्धित चौथी कृति 'पञ्चदण्डातपत्र छत्र प्रबन्ध नामक है । यह कृति सार्धपूर्णिमा गच्छ के अभयदेव

के शिष्य रामचन्द्र द्वारा वि.सं. १४९० में लिखी गई एक लघुकृति है। इसकी अनेक प्रतियाँ विभिन्न भण्डारों में उपलब्ध है। वेबर ने इसे १८७७ में बर्लिन से इसे प्रकाशित भी किया हैं।

(५) पञ्चदण्डात्मक विक्रमचरित्र नामक अज्ञात लेखक की एक अन्य कृति भी मिलती है। इसका रचनाकाल १२९० या १२९४ है।

(६) पञ्चदण्ड छत्र प्रबन्ध नामक एक अन्य विक्रमचरित्र भी उपलब्ध होता है, जिसके कर्ता पूर्णचन्द्र बताये गये है ।

(७) श्री जिनरत्नकोश की सूचनानुसार – सिद्धसेन दिवाकर का एक विक्रमचरित्र भी मिलता है । यदि ऐसा है तो निश्चय ही विक्रमादित्य के अस्तित्व को सिद्ध करने वाली यह प्राचीनतम रचना होगी। केटलागस केटलोगोरम भाग प्रथम के पृ.सं. ७१७ पर इसका निर्देश उपलब्ध है । यह अप्रकाशित है और कृति के उपलब्ध होने पर ही इस सम्बन्ध में विशेष कुछ कहा जा सकता है ।

(८) इसी प्रकार 'विक्रमनृपकथा' नामक एक कृति के आगरा, एवं कान्तिविजय भण्डार बडौदा में होने की सूचना प्राप्त होती है । कृति को देखे बिना इस सम्बन्ध में विशेष कुछ कहना सम्भव नहीं है ।

(९) उपरोक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त 'विक्रमप्रबन्ध' और विक्रम प्रबन्ध कथा नामक दो ग्रन्थों की और सूचना प्राप्त होती है । इसमें विक्रम प्रबन्धकथा के लेखक श्रुतसागर बताये गये है। यह ग्रन्थ जयपुर के किसी जैन भण्डार में उपलब्ध है ।

(१०) विक्रमसेनचरित नामक एक अन्य प्राकृत भाषा में निबद्ध ग्रन्थ की भी सूचना उपलब्ध होती है । यह ग्रन्थ पद्मचन्द्र किसी जैनमुनि के शिष्य द्वारा लिखित है । पाटन केटलोग भाग १ के पृ. १७३ पर इसका उल्लेख है ।

(११) विक्रमादित्यचरित्र नामक दो कृतियाँ उपलब्ध होती है, उनमें प्रथम के कर्ता रामचन्द्र बताये गये हैं। मेरी दृष्टि यह कृति वही

है, जिसका उल्लेख पञ्चदण्डातपत्रछत्र प्रबन्ध के नाम से किया जा चुका है । दूसरी कृति के कर्ता तपागच्छ के मुनिसुन्दरसूरि के शिष्य शुभशील बताये गये है। इसका रचनाकाल वि.सं. १४९० है ।

(१२) पूर्णचन्द्रसूरि के द्वारा रचित विक्रमादित्यपञ्चदण्ड छत्र प्रबन्ध नामक एक अन्य कृति का उल्लेख भी 'जिनरत्नकोश' में हुआ है । यह एक लघुकृति है इसके ग्रन्थाग्र ४०० है ।

(१३) 'विक्रमादित्य धर्मलाभादिप्रबन्ध' के कर्ता मेरुतुङ्गसूरि बताये गये है । इसे भी कान्तिविजय भण्डार बडौदा में होने की सूचना प्राप्त होती है ।

(१४) जिनरत्नकोश में विद्यापति के 'विक्रमादित्य प्रबन्ध' की सूचना भी प्राप्त है । उसमें इस कृति के सम्बन्ध में विशेष निर्देश उपलब्ध नहीं होते हैं ।

(१५) 'विक्रमार्कविजय' नामक एक कृति भी प्राप्त होती है । इसके लेखक के रूपमें 'गुणार्णव' का उल्लेख हुआ है ।

इस प्रकार जैन भण्डारो से 'विक्रमादित्य से सम्बन्धित पन्द्रह से अधिक कृतियों के होने की सूचना प्राप्त होती है । इसके अतिरिक्त मरुगुर्जर और पुरानी हिन्दी में भी विक्रमादित्य पर कृतियों की रचना हुई है । इसमें तपागच्छ के हर्षविमल ने वि.सं. १६१० के आसपास विक्रम रास की रचना की थी । इसी प्रकार उदयभानु ने वि.सं. १५६५ में विक्रमसेन रास की रचना की । प्राच्यविद्यापीठ शाजापुर में भी विक्रमादित्य की चौपाई की अपूर्ण प्रति उपलब्ध है । इस प्रकार जैनाचार्यों ने प्राकृत संस्कृत, मरुगुर्जर और पुरानी हिन्दी में विक्रमादित्य पर अनेक कृतियों की रचना की है - ऐसी अनेको कृतियों का नायक पूर्णतया काल्पनिक व्यक्ति नहीं माना जा सकता है ।

प्राच्य विद्यापीठ
दुपाडा रोड,
शाजापुर (म.प्र.) ४६५००१